आपने लिखा

संदर्भ का 32 वां अंक सही समय पर प्राप्त हुआ। विषय सूची देखते ही मेरी खुशी दोगुनी हो गई क्योंकि इसमें 'नेपच्यून की खोज' पर एक लेख था; और खगोलशास्त्र मेरा प्रिय विषय है। साथ ही लैंगिक द्विरूपता संबंधी लेख पढ़कर कुछ भ्रम भी दूर हुए। हम नर और मादा कौए में अंतर नहीं कर पाते और आगे भी नहीं कर पाएंगे। इस लेख को पढ़ने के कुछ दिनों बाद ट्रेन से सफर करते हुए नर नील गाय को देखने का सौभाग्य मिला।

'भाषा अनुभव और विज्ञान' पर लेख बहुत ही बेहतरीन था। लेख संगठित समाज की शक्ति की ओर इशारा करता है।

'स्कूली किताबों की भाषा' पढ़कर अपने स्कूली दिनों की याद आ गई जब किसी भी बात को समझने के लिए बड़ी माथापच्ची करनी पड़ती थी।

आसिफ अली खान
फतेहपुर, उ. प्र.

अंक 32 समय पर मिला, आशा है आगे भी समय पर मिलते रहेंगे। 'शौकिया वैज्ञानिक' में चींटी के बारे में रोचक जानकारी मिली।

'स्कूली किताबों की भाषा' लेख आज की स्कूली किताबों की हकीकत को पेश करता है। यह एक कड़वी सच्चाई है कि प्राथमिक कक्षाओं की किताबें स्कूली या कॉलेज के व्याख्याताओं से लिखवाई जाती हैं, जिन्हें व्यवहार में न तो प्राथमिक कक्षाओं को पढ़ाने का अनुभव होता है और न ही बाल मनोविज्ञान का ज्ञान। लेखक का यह सुझाव उचित है कि किताबों के लेखन में प्राथमिक कक्षाओं के शिक्षकों की भूमिका तय हो। साथ ही ग्रामीण और शहरी स्कूलों के छात्रों से उनकी पाठ्यपुस्तकों के बारे में विचार जान लिए जाएं तो और भी बेहतर होगा।

रमेश कुमार जांगिड़
हनुमानगढ़, राजस्थान

अंक 31 में दी गई कहानी 'अनारको और चोर अंकल' कुछ समझ में नहीं आई। कहानी पढ़कर लगा कि अनारको एक 7-8 साल की बच्ची है। मगर जिस तरह की बातें वह करती है उसके बस के बाहर की हैं। दूसरी बात 'चोर अंकल' को लगता है कि उनके हिस्से का खाना कोई मालदार उड़ा ले गया है तो उसे पाने का तरीका चोरी है, यह कुछ जंचता नहीं।

इस कहानी में 'चोरी' या 'चोर अंकल' को महिमा मंडित करने के अलावा कुछ नहीं निकलता। पता नहीं इस कहानी को छापने के पीछे आप लोगों की क्या सोच रही है। अगर आपको 'चोर अंकल' की बातों से साम्यवाद की महक आ रही हो तो मैं जानना चाहूंगी कि साम्यवाद की कौन-सी विचारधारा अपना उड़ाया हुआ खाना पाने के लिए चोरी जैसा घृणित तरीका सुझाती है।

वंदना त्रिपाठी
होशंगाबाद, म. प्र.

कंपनी का प्रचार कितना उचित ......

संदर्भ के अप्रैल-मई अंक में अनारको कहानी के चोर अंकल वाले चित्र को छोड़कर शेष सभी चित्रों के लिए विप्लव को बधाई। चोर अंकल वाले चित्र के साथ न्याय नहीं किया गया।

मुझे इस बात के लिए कहीं अधिक दुख है कि आपने इतनी प्रमुखता के साथ भारत पेट्रोलियम कंपनी का गुणगान और वह भी अपने शब्दों में गाया।

पिछले कई सालों से पूरी दुनिया में मौसम में हो रहे विनाशकारी बदलाव के लिए पेट्रोलियम कंपनियों को ज़िम्मेदार ठहराते हुए विश्व स्तर पर मुहीम चलाई जा रही है। पेट्रोलियम पदार्थों से इंसानी सेहत और पर्यावरण को होने वाले नुकसान में गाड़ियों के पेट्रोल में मिले सीसे से लेकर बच्चों के दिमाग को पहुंचने वाली गंभीर क्षति शामिल है। आपकी जानकारी में यह भी लाना चाहूंगा कि भारत पेट्रोलियम और भी तरीकों से बच्चों के दिमाग को नुकसान पहुंचा रहा है।

हाल के सालों में कई बड़ी कंपनियों ने भ्रामक तथ्यों और इंसानियत के खिलाफ विचारधाराओं के प्रचार-प्रसार में बच्चों को खासतौर पर निशाना बनाया है। कंपनियों ने इस प्रचार में इंटरनेट का काफी सहारा लिया है। इंटरनेट पर भारत पेट्रोलियम अपने वेबसाइट पर बच्चों के लिए खास 'लिंक्स' उपलब्ध करवाती हैं जैसे – टाइम फॉर किड्स, बार्बी डॉट कॉम, सी. आई. ए. किड्स पेज, गैप डॉट किड्स आदि। आप लोग बच्चों के साथ काम करते हैं। बच्चों को विनाशकारी उपभोगवाद व मानवताविरोधी विचारधाराओं में फांसते इन वेबसाइटों को बढ़ावा देने वाली भारत पेट्रोलियम कंपनी का प्रचार करने के लिए आपको अपनी गलती स्वीकार करनी चाहिए।

– सतीनाथ षडंगी, भोपाल, म. प्र.

32वां अंक पढ़ा। फाइनमेन तथा जे. बी. एस. हाल्डेन के लेख पढ़े। दोनों वाकई उम्दा हैं। लेकिन सोने के दांत वाले सांप में लगता है एक गड़बड़ हो गई है। एक जगह लिखा है कि एनाकोंडा अजगर जैसे ज़हरीले नहीं होते। ये बात अखरी। कहीं ये अनुवाद की त्रुटि तो नहीं। फिर नौ साल का मेरा भतीजा रजत एक दिन संदर्भ पढ़ रहा था। पहले तो उसने पूछा कि ये जे. बी. एस. कौन है। मैंने उसे

बताया कि ये एक बड़े जीव विज्ञानी हैं और ख्याति प्राप्त विज्ञान लेखक हैं। कुछ ही देर बाद उसने भी अजगर के ज़हरीले होने की बात लिखी होने का कहा और तुरंत बोला कि आप तो कह रहे थे कि ये बड़े वैज्ञानिक हैं। मुझे लगा कि एक छोटे बच्चे की यह बात जिसने संदर्भ पढ़कर इसे पकड़ा, ज़रूर लिखना चाहिए।

इसी अंक में पृष्ठ 96 पर 'जीव संदीप्ती' वाले कुकर-मुत्तों का बड़ा सुंदर चित्र है जिसके नीचे लिखा है – फफूंद यानी कुकर-मुत्ते। यहां यह स्पष्ट करना उचित होगा कि सभी फफूंद कुकर-मुत्ते नहीं होते। यह फफूंदों के समूह का केवल एक प्रकार है जो मेक्रोस्कोपिक फफूंद है। वैसे अधिकांश फफूंद अत्यंत सूक्ष्म होते हैं जिन्हें बिना सूक्ष्मदर्शी की मदद से नहीं देखा जा सकता।

किशोर पंवार
शासकीय महाविद्यालय, सेंधवा, म.प्र.

मैं शैक्षिक संदर्भ का 1995 से पाठक हूं। इससे हमें काफी जानकारियां मिलती हैं जिन्हें मैं और लोगों तक पहुंचाता हूं। मैं इस समय अनौपचारिक शिक्षा केंद्र चलाता हूं। हमारे शिक्षा केन्द्र के एक लड़के ने सवालीराम से यह सवाल पूछा है कि लड़के-लड़की की शादी हो जाने के बाद, शादी हो गई है इसकी अलग-अलग पहचान क्या है? जवाब ज़रूर दीजिए। इससे बच्चों का उत्साह बढ़ेगा।

यह खत नासिक जेल से लिख रहा हूं। परीक्षा देने हम कुछ साथी बंबई गए थे। सफर के दौरान जी. आर. पी. के साथ झगड़ा हो गया और फिलहाल जेल में बंद हैं। यद्रि कक्षा पहली से आठवीं के बच्चों के लिए कुछ नई सामग्री प्रकाशित हुई हो तो कृपया सूचित कीजिए।

अरविंद कुमार सोनार
रिठैया, इलाहाबाद, उ. प्र.

एक अनुरोध

आपको यह जानकर खुशी होगी कि आप सबके द्वारा भेजी पत्र-पत्रिकाओं से यहां (जेल में) एक छोटी-सी लाइब्रेरी तैयार हो गई है। यहां ढाई हज़ार बंदियों को पुस्तकें बांटकर उनके समय का सदुपयोग होते देखकर दिल खुश हो जाता है। आपसे एक निवेदन है कि चकमक और संदर्भ के अंक में हमारी ओर से एक अपील छापें कि पाठकों के पास आई पत्र-पत्रिकाएं व पुस्तकें पढ़ने के बाद उन्हें वे हमारे पास भेजकर कैदियों की मदद करें।

राजकुमार गुप्ता
नाशिक रोड़ जेल, नाशिक, महाराष्ट्र, पिन: 422101

बहस-मुबाहिसा

बच्चों की भाषा सीखने की क्षमता एक पहलू यह भी ......

प्रोफेसर रमाकांत का लेख और उस पर श्रीधर जोशी की टिप्पणी पढ़ी। दरअसल अंग्रेज़ी और हिन्दी की अलग-अलग किस्म की जटिलताएं हैं। 'बट' और 'पुट' जैसी अंग्रेज़ी की जटिलताएं तो काफी स्थूल और बहुचर्चित हैं। दूसरी ओर हिन्दी की जटिलताएं इतनी सूक्ष्म हैं कि अक्सर उनकी ओर हमारा ध्यान नहीं जाता। हम प्रायः अंग्रेज़ी की ऐसी जटिलताओं के परिप्रेक्ष्य में दोनों भाषाओं की तुलना करके मान बैठते हैं कि हिन्दी बहुत वैज्ञानिक और सरल भाषा है। इसे सीखने में बच्चे को कोई मुश्किल नहीं होनी चाहिए। उस लेख और पत्र पर मैं कुछ प्रतिक्रियाएं देना चाहूंगी।

— कोई वर्ण लिखने के लिए किसी एक तरीके को ही सही मानने का कोई औचित्य मुझे नज़र नहीं आता। सबको अपनी सुविधानुसार लिखने की छूट होनी चाहिए। हां, बच्चों की लेखन पद्धति का निरीक्षण ज़रूरी है क्योंकि जब बच्चा लिखना सीख रहा होता है तब बच्चे का हाथ सधा नहीं होता। वह अपनी सुविधानुसार वर्णों को टुकड़ों में बांटकर लिखता है और किसी भी दिशा में लिखने की शुरुआत करता है। ऐसे में यदि वह 'स' को

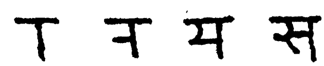

क्रम में लिखेगा तो बड़ी कक्षाओं में जाने पर जब उसे कई पन्ने लिखने पड़ेंगे तो उसकी लिखने की गति अपेक्षाकृत धीमी होगी क्योंकि ऊपर बताए तरीके से लिखने पर उसे कलम बार-बार उठानी पड़ेगी। इसलिए वर्ण लिखने के वे सभी तरीके मान्य होने चाहिए जिससे लिखने की रफ्तार बनी रहे। उदाहरण के लिए 'क' को

की तरह लिखने पर कम रवानगी है जबकि

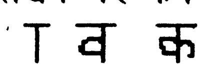

की तरह लिखना अधिक सुविधाजनक है।

— मात्राएं सीखना वास्तव में बहुत से बच्चों के लिए टेढ़ी खीर होता है। प्रश्न उठता है कि मात्राएं बच्चों को इतनी मुश्किल क्यों लगती हैं? क्या उन्हें मात्रा सिखाने के तरीके में कोई खामी है? श्रीधर जी ने लिखा है कि 'कई' और 'की' का अंतर स्पष्ट करने के लिए मात्राएं सीखना ज़रूरी है। देखा जाए तो 'कई' वस्तुतः क+ई (ka+i) है जबकि 'की' क + ी (k+i) है। पर हम 'की' को क + ी लिखते हैं। यदि कोई बच्चा 'आम' को 'ाम' लिख रहा है (ऐसा उदाहरण

मैंने देखा है) तो तार्किक दृष्टि से वह गलत नहीं है क्योंकि 'आ' और 'ा' दोनों ā ध्वनि के प्रतीक चिन्ह हैं। हां, प्रचलन की दृष्टि से इसे गलत माना जाएगा। मात्रा की स्वतंत्र सत्ता नहीं होती जबकि अ, आ ... आदि स्वतंत्र अक्षर हैं और वह हमेशा किसी वर्ण के साथ जुड़ती है। इसी प्रकार इ–ई और उ–ऊ के प्रयोग में बच्चे प्रायः गलती करते हैं क्योंकि शब्द के अंत में इनका उच्चारण लगभग एक-सा होता है।

– 'ष' और 'ऋ' का मूल उच्चारण तो अब खत्म हो गया है। ऐसे में बच्चों को यह बात समझने में समय लगेगा कि श–ष, रि–ऋ, और श्री–शृ किन शब्दों की वर्तनी में आते हैं। श्रीधर जी ने 'ऋ' को शुद्ध बोलना और पढ़ना सिखाने की बात कही है। हिन्दी के धुरंदर विद्वान भी 'ष' और 'ऋ' का सही उच्चारण नहीं कर पाते फिर अध्यापक से ही यह अपेक्षा क्यों की जाए? चूंकि 'ऋ' का इस्तेमाल हिन्दी के गिने-चुने शब्दों में होता है इसलिए बच्चा धीरे-धीरे यह सीख ही जाता है कि उसे लिखते हुए 'ऋ' का इस्तेमाल कहां करना है।

– श्रीधर जी ने 'गई' और 'गयी' में गयी को सही माना है। पर हिन्दी में गई, लिए, नई आदि अब पूरी तरह स्वीकृत व प्रचलित हैं क्योंकि हम इनका उच्चारण इसी तरह करते हैं; गयी, आयी, लिये, नयी आदि नहीं बोलते। पर यहां प्रश्न सही व्याकरणिक रूप नहीं बोलने की सुविधा का है। ये परिवर्तन 'जैसा बोलो वैसा लिखो' की दिशा में एक कदम है जिसे स्वीकार किया जाना चाहिए।

– यहां मुद्दा यह साबित करना नहीं है कि अंग्रेज़ी और हिन्दी में से कौन-सी भाषा ज्यादा जटिल या वैज्ञानिक है। सरल और वैज्ञानिक मानी जाने के बावजूद हिन्दी में कई जटिलताएं और अ-वैज्ञानिकताएं हैं। हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि भाषा बहता नीर है। नियमों के पालन से भाषा जीवित रहती है – यह अर्द्ध सत्य है। भाषा परिवर्तनशील है क्योंकि उसके नियम परिवर्तनशील हैं। ध्वनि संबंधी नियमों में परिवर्तन होने पर बोलने व लिखने का अंतर बढ़ेगा ही क्योंकि लिखने में परिवर्तन को जल्दी स्वीकृति नहीं मिलती।

इन सब बातों को ध्यान में रखते हुए बच्चों को भाषा सिखाई जानी चाहिए और उनकी भाषा सीखने और गलतियां करने की प्रक्रिया को समझना चाहिए। बच्चों में इन जटिलताओं से निपटने की सहज क्षमता होती है जो अनुकूल परिवेश और प्रोत्साहन से धीरे-धीरे विकसित होती है। यही कारण है कि बहुत कम बच्चे 'क्रिया' को 'कृया', 'तृतीय' को 'त्रितीय' और 'पृथ्वी' को 'प्रिथ्वी' लिखने की गलती करते हैं।

मुकुल प्रियदर्शिनी
मयूर विहार, दिल्ली

बच्चों की भाषा सीखने की क्षमता

अंक 28 व 29 में दो भागों में छपे मेरे लेख 'बच्चों की भाषा सीखने की क्षमता' पर जो श्रीधर जोशी व गंगा गुप्ता ने अंक 30 में अपनी प्रतिक्रिया भेजी है उसके लिए मैं उनका आभारी हूं। मुझे अच्छा लगा कि गंगा गुप्ता को भाषा की संरचना समझने में कुछ मदद मिली। संदर्भ के माध्यम से भाषा पर एक संवाद जारी रहे यह हम सबके लिए लाभकारी है। श्रीधर जी से लंबी बातचीत हो सके तो अच्छा। शायद कभी उनसे मिलने का अवसर मिले। लेकिन एक-दो मुख्य बातें अभी कह दूं। विशेषकर कुछ ऐसी बातें जिनकी तरफ श्रीधर जी ने ध्यान नहीं दिया या मैं ठीक से कह नहीं पाया।

एक मुख्य मुद्दा है बच्चे की सीखने की क्षमता का। ध्वनि—संरचना व लिपि व्यवस्था के अनेक ऐसे अमूर्त नियम होते हैं जो न तो मां-बाप बता सकते हैं और न ही शिक्षक (हालांकि वे उन नियमों को जानते हैं पूरी तरह से)। फिर भी हर बच्चा उन नियमों को सहज संजो लेता है।

दूसरा मुद्दा है बोलचाल की भाषा व लिपि के संबंध का। हर समाज़ यही सोचकर लिपि-व्यवस्था का संयोजन करता है कि ध्वनि व वर्णों आदि में सही तालमेल हो। भला कोई भी लिपि बनाने वाला ऐसी व्यवस्था क्यों बनाएगा कि put तो 'पुट' हो लेकिन but 'बट'। सच तो यह है कि आज भी लाखों अंग्रेज़ी बोलने वाले but को 'बुट' ही कहते हैं और bus को 'बुस' व cup को 'कुप'।

बोलचाल की भाषा अत्यधिक तीव्र गति से बदलती है। लिखने के तरीके अधिक स्थाई होते हैं और धीमी गति से बदलते हैं। इसलिए ध्वनि व वर्णों में बिठाया गया तालमेल गड़बड़ा जाता है। फिर भी बच्चे में क्षमता होती है कि वह सभी गुत्थियां सुलझा लेता है उस व्यवस्था की।

मुझे देवनागरी लिपि से कोई शिकायत नहीं और न ही मैं रोमन लिपि का दीवाना हूं। बात है भाषा व लिपि के संबंध को समझने की। जब कोई हिन्दी-भाषी 'ऋ' या 'ष्' बोलेगा ही नहीं तो बच्चे उस ध्वनि को स्वतः कैसे लिख लेंगे। हां, बताने पर चित्र की तरह कुछ शब्द वे याद कर लेते हैं यथा 'ऋषि वाली ऋ' या 'षट्कोण वाला ष्'। 'इ—ई' व 'उ—ऊ' में अंतर अवश्य है लेकिन बोलचाल की भाषा में कम होता जा रहा है। इसका कारण यह नहीं कि कक्षाओं में श्रुतलेख बंद हो गया है अपितु यह कि बोलचाल की भाषा निरंतर बदलती रहती है और लिपि इस दौड़ में पीछे रह जाती है। बोलचाल की भाषा निरंतर न बदलती तो हम आज भी संस्कृत ही बोलते। दूसरी तरफ संस्कृत और हिन्दी

आज भी देवनागरी में ही लिखी जाती है।

तीसरा मुद्दा है विविधिता का। मानकीकरण का खूब बोल-बाला है। फिर भी भाषा में, लिपि में व सीखने के तरीकों में खूब विविधता रहती है। कोई भी दो व्यक्ति एक तरह से नहीं लिखते। किसी भी वर्ण को एक ही तरह से लिखा जाएगा और वही तरीका सही माना जाएगा, ऐसा नहीं है। हर व्यक्ति का लिखने का अपना तरीका होता है। देवनागरी में छोटी 'इ' की मात्रा को देखिए। यह मात्रा लिखी तो व्यंजन से पहले जाती है लेकिन बोलते समय इसका उच्चारण बाद में किया जाता है जैसे कि, किस, किसान आदि। लिखने का क्या नियम होना चाहिए – पहले 'ि' की मात्रा लिखें या 'क'। बच्चा कैसे भी लिखे, कोई आपत्ति नहीं होनी चाहिए।

हम लोग बच्चों को अधिकतर यह सोचकर पढ़ाते हैं कि उन्हें कुछ नहीं आता। हमें उन्हें 'सिखाना' है। ध्वनि संरचना व लिपि व्यवस्था के उदाहरण देकर मैं केवल बच्चों की स्वयं सीखने की क्षमता की तरफ इशारा करना चाहता था। यदि हम बच्चों की क्षमता व व्यवहारिक विविधिता को ध्यान में रखकर बच्चों को पढ़ाएं तो पढ़ाई-लिखाई कहीं अधिक रुचिकर हो सकती है। बच्चों के प्रति हमारा दृष्टिकोण बदलना चाहिए यही मुख्य बात है।

श्रीधर जी ने एक बात बिल्कुल सही कही। मेरे पास समाधान नहीं हैं। समस्या को समझने का प्रयास भर है। जब बच्चे की क्षमता, भाषा की संरचना व सीखने की प्रक्रिया को ही नहीं समझेंगे तो समाधान क्या देंगे।

रमाकांत अग्निहोत्री
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली